Nav Jyoti, Vol. 6, No. 12, January-June 2018 ISSN : 2249-7331

मुस्लिम समाज में महिला शिक्षा की स्थिति का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

नायाब जेबा

शोध छात्रा, स्नातकोतर समाजशास्त्र विभाग, रांची विश्वविद्यालय रांची

मानव संसाधनों के विकास का प्रमुख उत्प्रेरण शिक्षा है। शिक्षा विकास का एक केंद्र बिंदू है, जिस पर समाज का विकास निर्भर करता है। शिक्षा से ज्ञान का प्रसार होता है। ज्ञान आंतरिक बल देता है, जो कि लोगों को शोषण व गरीबी से मुक्ति पाने के लिए बहुत आवश्यक हैं। निरक्षरता से उत्पन्न अज्ञानता के कारण समाज में उपलब्ध आर्थिक सुअवसरों का लाभ नहीं उठाया जा सका। शिक्षा की अनुपलब्धता से दो विभिन्न प्रणालियां, एक परंपरा व अज्ञानता पर आधारित, और दूसरी प्रोद्योगिकी व प्रवर्तनों पर आधारित, उत्पन्न होती हैं। इस परिवर्तन प्रक्रिया काल में शिक्षा की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है, जिसके अंतर्गत आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में विकास के साथ ही विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में नए प्रवर्तनों के बारे में समुदाय को सूचित करना है। इन सब कारणों से शिक्षा समाज के लिए अत्यंत लाभकारी होते हुए समस्याओं के निदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा और अपेक्षित कुशलता की कमी के कारण जहां समाज में लोग नई आर्थिक सुविधाओं व अवसरों का लाभ नहीं उठा पाए वहीं दूसरी ओर इसने समाज के सामने अनेकों समस्याओं को जन्म दिया। इस शोाध पत्र के माध्यम से मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा की स्थिति को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

शिक्षा से महिलाओं में आत्मविश्वास, अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता तथा अन्याय से लड़ने की नैतिक शक्ति पैदा होती है। देश के महान सपूत गोपाल कृष्ण गोखले ने ब्रिटिशकालीन विधानसभा में शिक्षा के अधिकार की बात कही थी। तब से लेकर आज तक इसे कानून का रूप देने के लिए चरणबद्ध तरीके से कई बदलाव किए गए। करीब छह दशक के सफर के बाद केंद्र सरकार ने शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा देकर ऐतिहासिक फैसला लिया है।

एक अप्रैल 2010 से पूरे देश में शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 को शत प्रतिशत लागू कर दिया गया है। यह कानून शिक्षा हासिल करने को हर बच्चे का अधिकार बनाता है। अधिनियम सभी संबंधित सरकारों के लिए यह सुनिश्चत करना बाध्यकारी करता है कि हर बच्चा मुफ्त शिक्षा प्राप्त करे। अधिनियम में यह भी अनिवार्य प्रावधान किया गया है कि निजी शिक्षण संस्थानों को भी अपने यहाँ 25 प्रतिशत सीटें कमजोर तबके के लिए आरक्षित रखनी होगी।

शिक्षा का अधिकार कानून लागू होने का सबसे अधिक फायदा ग्रामीण इलाकों को मिल रहा है क्योंकि गांवों में अभी भी शिक्षा के प्रति जगरूकता का अभाव है। ड्रॉपआउट होने वाले और स्कूल न जाने वाले करीब 92 लाख बच्चे ग्रामीण इलाके से ही ताल्लुक रखते हैं। ऐसे में ग्रामीण इलाके की शिक्षा व्यवस्था में सुधार की दिशा में यह एक पहल है। इस कानून के लागू हुए अभी 5 साल हो चुके हैं परंतु समाज पर इसका असर दिखने लगा है।

स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार के द्वारा ग्रामीण इलाकों में रह रहे लोगों को साक्षर बनाने के लिए कई कार्यक्रम चलाए गए जिनमें 1989 में शुरू की गई 'महिला समाख्या योजना', 15 अगस्त 1995 से आरंभ 'मध्याहन् भोजन योजना' और अप्रैल 2001 में शुरू किया गया 'सर्व शिक्षा अभियान' प्रमुख है। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के जरिए किसानों के बीच अधिक उपज देने वाले बीजों की किस्मों को लोकप्रिय बनाने के लिए एक अंतर मंत्रालयी परियोजना बनाई गई जो किसानों के लिए प्रशिक्षण एवं कार्यात्मक साक्षरता कहलाती है। साथ ही निरक्षरता उन्मूलन कार्यक्रमों में महिलाओं को विशेष प्राथमिकता दी गई है। गांवों में शिक्षा के प्रसार में गैर सरकारी संगठन और व्यक्ति भी रचनात्मक भूमिका निभा रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों के दौरान अनेक सेवाभावी व्यक्ति और स्वयंसेवी संगठन गांवों के गरीब और उपेक्षित

बच्चों को साक्षर बनाने के लिए आगे आए हैं। इन लोगों ने उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद बढ़िया कैरियर बनाने और धन कमाकर शहरों में ऐशो आराम की जिंदगी बिताने का मोह त्यागकर गांवों में ज्ञान की लौ जगाने को अपने जीवन का मिशन बनाया है। झारखण्ड में भी महिला साक्षरता की दिशा में एक अभिनव प्रयास हो रहा है। एक अनूठे प्रयोग के अंतर्गत सचल पुस्तकालय चलाये गये हैं जो पाकुड़ जिले के महेशपुर विकासखंड के 30 गांवों में साक्षरता और अधिकार चेतना की लौ जला रहे हैं। परंतु शिक्षा के विकास के साथ महिलाओं की स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ है। और उनके साथ सामाजिक व आर्थिक मोर्चों पर होने वाले भेदभाव अभी भी बने हुए हैं।

शिक्षा को परिभाषित करते हुए हरबर्ट स्पेंसर ने लिखा है कि शिक्षा शरीर के अव्यवों को उन्नत बनाती है तथा उन्हें जीवन के योग्य बनाती है।[1] शिक्षा के तीन प्रमुख उददेश्य हैं– 1. अपने–आप और जगत् को जानना और स्वयं को शिक्षा–जगत् से प्रभावशाली ढंग से जोड़ना, 2. अतीत और भविष्य के बीच कड़ी का निर्माण, अर्थात् अतीत के एकत्रित परिणामों का विकासमान पीढ़ी को संप्रेषण करना ताकि वह सांस्कृतिक विरासत को आगे ले जा सके और भविष्य का निर्माण कर सके, 3. जहाँ तक संभव हो, मानव प्रगति की प्रक्रिया को तेज करना। इन उददेश्यों के अतिरिक्त शिक्षा के तीन और उददेश्य माने जाते हैं। ये हैं–1. व्यक्तित्व के गुणों का समग्र विकास, जैसे–बुद्धि, दक्षता इच्छा शक्ति, चरित्र, अभिरूचियाँ आदि, 2. मनुष्य की जीवन दशाओं में विकास, अर्थात् समाज और व्यक्ति दोनों का विकास। समाज के विकास का अर्थ केवल आर्थिक विकास से ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक विकास से भी है। व्यक्ति के विकास में शिक्षा एक विवेकशील और आदर्श मस्तिष्क बनाने में सहायक होती है, और 3. शांति और समन्वय पैदा करना तथा उसे सुदृढ़ करना। यहां शांति को युद्ध के विलोम के रूप में नहीं देखा गया है, बल्कि इसे सकारात्मक दृष्टि से देखा गया है, जो अंतराष्ट्रीय समझ और सहयोग के प्रयत्न के उददेश्य से समन्वित कार्य करे। इसमें सभी लोगों के प्रति आदरभाव, उनकी संस्कृति, सभ्यता, मूल्यों और जीवनशैली के प्रति सम्मान निहित है। सन् 1971 से यूनेस्को द्वारा स्थापित शिक्षा के विकास पर गठित अन्तर्राष्ट्रीय आयोग वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार शिक्षा की प्रमुख आवश्यकता है, जानना, हासिल करना, बनना। सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का उददेश्य पढ़ना, लिखना, सीखना है, माध्यमिक स्तर पर चरित्र–निर्माण, उच्च माध्यमिक स्तर पर समाज को समझना, और कॉलेज/विश्वविद्यालय स्तर पर ज्ञान के क्षेत्र में दक्षता हासिल करना है। शिक्षा के उददेश्यों की डेलार्स आयोग रिपोर्ट में रेखांकित किया गया है, जो शिक्षा के चार स्तम्भों की बात करते हैं– 1. विभिन्न विषयों पर एक व्यापक दृष्टिकोण रखते हुए और चुनिंदा क्षेत्रों पर परिश्रम से कार्य करते हुए दक्षता को विकसित करना, सीखने की शिक्षा और जीवन के अनुभवों से शिक्षा प्राप्त करना। 2. व्यावसायिक दक्ष्ता प्राप्त करते हुए कार्य करना, सीखना और एक टीम के रूप में तथा विभिन्न परिस्थितियों में कार्य करने की क्षमता विकसित करना। 3. साथ–साथ रहने की शिक्षा, दूसरों की संस्कृति, बहुभाषावाद, शान्ति का सम्मान करना और विवाद को दूर करने की कला तथा 4. अपने आपको एक बेहतर व्यक्तित्व के रूप में विकसित करने की शिक्षा ताकि व्यक्ति को न केवल अपने उतरदायित्वों का एहसास हो, बल्कि वह सही समय पर उपयुक्त निर्णय लेते हुए अपने आपको एक श्रेष्ठ व्यक्तित्व के रूप में स्थापित करे।[2]

शिक्षा का समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

अलग–अलग विद्वान शिक्षा का आकलन एवं मूल्यांकन अलग–अलग प्रकार से करते हैं। इन दृष्टिकोणों का मूल्यांकन कभी कभी एक दूसरे के विपरीत होता है। मार्क्सवादियों के दृष्टिकोण का प्रकार्यवादियों ने विरोध किया है। मार्क्सवाद की मूल दृष्टि से साम्य रखते हुए फ्रांसिसी विद्वान पी. बोरदयू[3] ने कहा कि शिक्षा का मुख्य कार्य शासक वर्ग की संस्कृति, अर्थात् विचारधारा, मूल्यों एवं हितों का सांस्कृतिक पुनरूत्पादन करना है। प्रभुवर्ग शिक्षा के माध्यम से विशेष प्रकार के अर्थ को लोगों पर थोप देते हैं, उन्हें सही साबित करते हैं। प्रभुवर्ग की संस्कृति, सांस्कृतिक पूँजी है। यह केवल प्रभुवर्ग के पास होती है। इस संस्कृति से प्रभुता स्थापित करने सरलता होती है।

बोरदयू ने कहा कि निम्न वर्ग के बच्चे यही समझते हैं कि उन्हें कुछ विशेष हासिल नहीं होना है, इसलिए वे प्रयास ही नहीं करते हैं। वे समझते हैं कि चाहे कुछ भी कर लें, बड़ों की सुविधाएँ उन्हें नहीं मिल सकती हैं। इस प्रकार असमान वर्गों की व्यवस्था या बनावट बार–बार पैदा होती रहती है। इसे बोरदयू ने सामाजिक पुनरूत्पादन कहा है। बोरदयू ने शिक्षा को सांस्कृतिक पूँजी कहा है।

प्रकार्यात्मक परिप्रेक्ष्य

एमिल डर्कहाइम[4] ने कहा है कि शिक्षा समाज की आवश्यकता को पूरा करती है। शिक्षा से समाज में एकता, सुदृढ़ता एवं स्थिरता उत्पन्न होती हैं। शिक्षा से समाज में समरूपता उत्पन्न होती है। समाज की निरंतरता के लिए समरूपता की आवश्यकता होती है। डर्कहाइम ने ऐसी शिक्षा की आलोचना की है, जो केवल व्यक्तिगत कुशलता एवं प्रतियोगिता को बढ़ावा देती है।

शिक्षा का प्रकार्यात्मक विचार शिक्षा द्वारा सामाजिक तंत्र को बनाये रखने में किये गये सकारात्मक योगदान पर ध्यान केंद्रित करता है। एमिल डर्कहाइम के अनुसार शिक्षा का प्रमुख कार्य समाज के मानकों व मूल्यों का संप्रेषण करना है। डर्कहाइम का मानना था कि स्कूल वह कार्य करते हैं, जो परिवार तथा समवयस्क समूह भी नहीं कर सकते। स्कूल में बालक निश्चित नियमों के अंतर्गत ही अन्य लोगों के साथ अंतःक्रिया करता है। यह अनुभव बालक को समाज के सदस्यों के साथ समाज के नियमों के अंतर्गत अंतः क्रिया करने हेतु तैयार करता है। स्कूल बच्चों में उन मूल्यों का सम्प्रेषण करता है, जो समाज के अस्तित्व के लिए आवश्यक समजातीयता प्रदान करते हैं। स्कूल बालकों को विशिष्ट कौशल प्रदान करते हैं, जो सामाजिक सहयोग में विविधता बनाये रखने हेतु आवश्यक होते हैं। एमिल डर्कहाइम के समान ही पारसंस भी यही मानते हैं कि विद्यालय समाज का लघुरूप में प्रतिनिधित्व करते हैं। विद्यालय बच्चों को समाज के मूलभूत मूल्यों में समाजीकृत करते हैं। समाज को प्रभावी रूप से चलाने हेतु मूल्यों के बारे में मतैक्य आवश्यक है। पारसंस[5] ने भी प्रकार्यवादी दृष्टि से शिक्षा की चर्चा की। शिक्षा से सार्वभौमिक मूल्य पनपते हैं एवं अपनाए जाते हैं। पारसंस ने कहा कि स्कूल एक छोटा समाज है। स्कूल में बच्चे जो भूमिकाएँ सीखते हैं, बाद में व्यापक समाज में उनका प्रयोग करते हैं। शिक्षा से समाज के मूल्य सिखाए जाते हैं। मूल्यों के संबंध में सहमति समाज को चलाने के लिए जरूरी है। पारसंस ने कहा कि अमरीकी समाज में दो मूल्य आम हैं– एक उपलब्धि पर आधारित मूल्य एवं दूसरा अवसरों की समानता का मूल्य। शिक्षा से समाजीकरण एवं सामाजिक नियंत्रण का कार्य होता है।

उदार परिप्रेक्ष्य–

शिक्षा का उदार विचार समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य नहीं है। यह परिप्रेक्ष्य शिक्षा का व्यक्ति से संबंध पर ध्यान केंद्रित करता है। डीवी मानते थे कि शिक्षा का उददेश्य व्यक्ति को अपनी संपूर्ण क्षमता को विकसित करने हेतु प्रोत्साहन देना है। ईवान इलीच[6] ने अपनी पुस्तक डी स्कूलिंग इन सोसाइटी में वर्तमान औपचारिक शिक्षा पद्धति को अव्यवहारिक एवं अनुपयोगी बतलाया है। उनके विचार से लोगों को इस शिक्षा– पद्धति से बाहर निकलना चाहिए। समाज को विद्यालय रहित करने की आवश्यकता है। वर्तमान शिक्षा लोगों को वैश्विक दृष्टिकोण प्रदपन करने में असफल रही हैं नये शिक्षा संस्थानों की स्थापना परंपरागत शिक्षा संस्थानों का विकल्प नहीं हो सकते हैं। उनके विचार से समाज को विद्यालय विहीन करने की आवश्यकता है। इलीच एक ऐसी शिक्षा की बात करते हैं, जो अनौपचारिक तथा आत्म–निदेशित हो। लोगों को वर्तमान संस्थागत स्कूली शिक्षा पद्धति से बाहर निकालकर शिक्षित करने की आवश्यकता है। उन्होंने वेब शिक्षा पर काफी बल दिया है, अर्थात् ऐसी शिक्षा जिसे व्यक्ति स्वतंत्र होकर कम्प्यूटर पर अर्जित कर सकता है। शिक्षा की कोई उम्र सीमा नहीं होती है। यह आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक को एक दूसरे से जीवन पर्यन्त कुछ –न–कुछ सीखते रहना चाहिए, ऐसा इलीच का मानना था। लेकिन यह विचार काफी अव्यवहारिक प्रतीत होता है। उनके विचारों में शिक्षा के बारे में बौद्धिक सनक जैसा कुछ प्रतीत होता है।

संघर्षात्मक परिप्रेक्ष्य–

संघर्षात्मक परिप्रेक्ष्य के अनुसार शिक्षा की प्रमुख भूमिका पूँजीपतियों को कार्य हेतु जन–संसाधन उपलब्ध कराना है। पूँजीवादी व्यवस्था को ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता होती है, जो कर्मठ एवं विनम्र हों तथा वे इतने बँटे हुए हों कि वे प्रबन्धन के अधिकारों को चुनौती न दे सकें। पूँजीवादी व्यवस्था में अतिरिक्त कुशल श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इससे उन्हें श्रमिकों को कम मजदूरी देने तथा श्रमिकों को स्थानापन्न करने में सहायता मिलती है। साथ ही श्रमिकों को संगठित होने में कठिनाई होती हैं। इसके अतिरिक्त सम्पन्न व सताधारी लोगों के बच्चों को अधिक अवसर मिलते हैं तथा वे उच्च वेतन वाली नौकरियों पर कब्जा कर लेते हैं। शिक्षा यह मिथ्या भ्रम पैदा करती है कि सता के शीर्ष स्तर पर बैठे लोग ही सता व विशेषाधिकार पाने की पात्रता रखते हैं। शिक्षा तंत्र इसे गुणों को महत्व देने वाले तंत्र की आड़ में मूर्तरूप देता है।

योग्यतातंत्र का दृष्टिकोण–

ऐसा समाज, जहाँ व्यक्तियों की स्थिति का निर्धारण उनकी विशेष योग्यताओं तथा गुणों के आधार पर होता है, न कि उसकी पैतृक स्थिति, आयु, लिंग या जाति के आधार पर। इस पद की रचना माइकेल यंग[7] ने अपनी पुस्तक द राइस ऑफ मैरिटोक्रैसी में की है। उन्होंने इस पद का प्रयोग ऐसी सरकार के लिए किया जो अत्यधिक योग्य एवं उच्च उपलब्धिपरक व्यक्तियों द्वारा चलाई जाती है। योग्यता से उनका तात्पर्य बुद्धि के साथ प्रयास के मेल से है। उनके अनुसार भविष्य में समाज में सबसे योग्य व्यक्ति ही सभी सुविधाओं को भोगने के अधिकारी होंगे। शिक्षा व्यवस्था वह माध्यम होगी जिससे मेधा का निर्धारण होगा। इस अवधारणा की बहुत अधिक आलोचना हुई। यह प्रश्न उठता है कि मेधा के निर्धारण का वस्तुनिष्ठ आधार क्या है?

उतर–आधुनिक परिप्रेक्ष्य–

रॉबिन उशर व रिचर्ड एड्वर्ड्स[8] ने अपनी पुस्तक उतर आधुनिकवाद व शिक्षा में शिक्षा के भविष्य के संबंध में चार संभावनाओं का उल्लेख किया है–

1. आधुनिक शिक्षा–पद्धति जारी रह सकती है।
2. शिक्षा–पद्धति को इस प्रकार पुनर्गठित किया जा सकता है, जिसमें पारंपरिक मूल्यों पर बल देने के प्रयास किये जायेंगे तथा सभी व्यक्तियों पर समान मूल्य आरोपित किये जायेंगे।
3. शिक्षा को इस प्रकार आकार दिया जाये, कि वह पूँजीवादी पद्धति को परिलक्षित करें। शिक्षा की विषय–वस्तु को इस प्रकार संशोधित किया जायेगा, जिसमें उस ज्ञान को अधिक महत्व दिया जायेगा जो उपयोगी हो तथा जो सत्य की खोज पर अधिक बल न देकर लाभ कमाने में सहायता करें।
4. अंतिम संभावना यह हो सकती है कि शिक्षा सांस्कृतिक बहुवाद विभिन्न समूहों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर उतर आधुनिकवाद के पहलुओं को परिलक्षितकरें। उशर व एड्वर्ड्स मानते हैं कि विभिन्न लोगों, जिनमें वे समूह भी शामिल हैं, जो अपेक्षाकृत शक्तिविहीन हैं तथा वर्तमान में जिनका शिक्षा तंत्र पर कम प्रभाव है, उन्हें विभिन्न प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है। उतर आधुनिकतावादी इस दावे को टालने का प्रयास करते हैं कि उनका विचार एक सुसंगत सिद्धांत पर आधारित है। वे शिक्षा तंत्र में परिवर्तनों का वर्णन कर रहे हैं अथवा किसी विशिष्ट दिशा में परिवर्तनों का वर्णन कर रहे हैं अथवा किसी विशिष्ट दिशा में परिवर्तन करने की वकालत कर रहे हैं अथवा उपर्युक्त दोनों कर रहे हैं, यह अक्सर स्पष्ट नहीं होता। माइकल डब्ल्यू एपल मानते हैं कि उतर आधुनिकतावादी शिक्षा में स्थानीय संघर्षों पर अत्यधिक ध्यान केंद्रित कर रहे हैं तथा ऐसा करने में वे मुख्य बात से अपना ध्यान हटा रहे हैं। उतर आधुनिकतावादी शक्तिशाली आर्थिक व राजनीतिक कारकों को नजरअंदाज कर रहे हैं, जो उन परिवर्तनों को आने से रोक रहे हैं, जिनकी वे अपेक्षा कर रहे हैं।[9]

अगर हम महिला साक्षरता के इतिहास पर नजर डाले तो, महिला साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। सन् 1951 की जनगणना के अनुसार केवल 8.66 प्रतिशत् महिलाएं ही साक्षर थी। सन् 1991 में साक्षरता दर में वृद्धि देखने को मिली जो 39 प्रतिशत् थी और सन् 2001 में कराए गए जनगणना के बाद महिला साक्षरता दर 54.16 प्रतिशत् प्राप्त हुआ। पिछले दशक (1991–2001) में महिला साक्षरता दर में 15 प्रतिशत् की वृद्धि होना उत्साहजनक माना जा सकता है। पर, पुरूष साक्षरता दर से काफी कम है। इसमें अगर मुस्लिम साक्षरता दर देखें तो यह और भी कम नजर आती हैं। सच्चर समिति की रिपोर्ट[10] में यह बात स्पष्ट की गई है कि दूसरे समुदायों की तुलना में मुस्लिम समाज काफी पीछे है। भारत में जहां संपूर्ण साक्षरता दर 74 प्रतिशत है वहीं मुस्लिम में यह 60 प्रतिशत है। जिसका एक प्रमुाख कारण उनमें ड्रॅप आउट की उंची दर है। जहां सामान्य समुदायों में 26 प्रतिशत लोग 17 वर्ष की आयु में मैट्रिक की शिक्षा पूरी कर पाते हैं वहीं मुस्लिम में यह मात्र 17 प्रतिशत है। दूसरी ओर मुस्लिम महिलाओं में यह 50. 1 प्रतिशत है वहीं उनके पुरूष समुदाय में यह 67.6 प्रतिशत है। जो राष्ट्रीय स्तर से 53.2 प्रतिशत है। यहां पर यह ध्यान देने की बात है कि 64.3 प्रतिशत मुस्लिम ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं जबकि कुल मुस्लिम साक्षरता 59.1 प्रतिशत हैं वहीं ग्रामीण मुस्लिम साक्षरता 52.7 प्रतिशत ही है। जबकि 50 प्रतिशत नगरीय मुस्लिमों में साक्षरता दर 70 प्रतिशत हैं। 61 राउंड के राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण[11] की रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण मुस्लिम महिलाओं में साक्षरता दर मात्र 41 प्रतिशत ही है।

मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा की स्थितिः

मुस्लिम समाज में महिलाओं की प्रस्थिति बहुत ही निम्न है तथा प्रत्येक स्तर पर पुरूष वर्ग को विशेष वरीयता दी जाती है जो कि महिला निरक्षरता का प्रमुख कारण है। अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में माता–पिता यह समझने में असमर्थ हैं कि वे अपनी पुत्रियों को शिक्षित क्यों बनाए। वे बालिकाओं को घरेलु कामकाज का प्रशिक्षण देना अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। वास्तव में यह मुस्लिम समाज में महिलाओं को प्रदान की गई गृहिणी और मां की प्रभावशाली भूमिका को प्रतिबिम्बित करता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका के जवान होते ही उसके बाहर–जाने पर पाबंदी लगा दी जाती है। यदि विद्यालय अधिक दूरी पर स्थित है और परिवहन सुविधा या महिला अध्यापिकाएं उपलब्ध नहीं हैं तो समस्या और भी अधिक जटिल हो जाती है। बालिकाओं का विवाह किशोरावस्था आरंभ होने से पहले ही कर दिया जाता है क्योंकि माता–पिता अधिकतर सामाजिक आलोचना का सामना करने में असमर्थ होते है। अतः शीघ्र विवाह महत्वपूर्ण कारण है।

बालिकाएं प्रायः खेतों मे ंकाम करती है या घरेलु काम–काज करती हैं अथवा छोटे भाई–बहनों की देख–भाल करके अपने परिवार की सहायता करती हैं। ऐसे मामलों में परिवार अपनी लड़की को विद्यालय में भेजना नहीं चाहता है और कार्य में उसकी सहायता से वंचित नहीं होना चाहता।

मुस्लिम महिलाओं में निम्न शिक्षा स्थिति के प्रमुख कारण निम्नांकित हैं–

- माता–पिता की रूढ़ीवादीता
- सामाजिक रीति–रिवाज और प्रतिबंध
- महिला अध्यापिकाओं की कमी
- विद्यालय भवनों तथा छात्रावासों की कमी
- ग्रामीण विद्यार्थियों के लिए अप्रसांगिक पाठ्यक्रम
- परिवहन सुविधा की कमी
- बालिकाओं की छोटी आयु में विवाह होना
- बालिकाओं से घर में काम–काज कराने और अपने छोटे भाई–बहनों की देख–भाल कराने के लिए उन्हे घर पर रोके रहना तथा विद्यालय न भेजना।

निष्कर्ष

मुस्लिम महिलाओं की समाज में इस प्रकार की निम्नतर स्थिति का कारण कहीं न कहीं उनकी समाजिक स्थिति का निम्नतर होना है। जिससे समाज में उनको अपेक्षित स्थान नहीं प्रदान कराया जा सका और शिक्षा की कमी के कारण वे अपने अधिकारों की मांग को सशक्त रूप से पूरा भी नहीं कर पाईं। पुरानी सामाजिक व्यवस्था में कुछ वर्गों को शिक्षा से वंचित रखा गया था। शिक्षा की कमी से इन वर्गों का शोषण हुआ। महिलाओं के शोषण व इनकी दयनीय दुर्दशा के लिए मुख्य रूप से उतरदायी शिक्षा की कमी है। मानव संसाधनों के विकास का प्रमुख उत्प्रेरण शिक्षा है। महिलाओं के लिए शिक्षा एक केंद्र बिंदु है, जिस पर उनका विकास निर्भर करता है। शिक्षा से ज्ञान का प्रसार होता है। ज्ञान आंतरिक बल देता है, जो कि महिलाओं के शोषण व गरीबी से मुक्ति पाने के लिए बहुत आवश्यक हैं। निरक्षरता से उत्पन्न अज्ञानता के कारण महिलाओं नए आर्थिक सुअवसरों का लाभ नहीं उठा पाई। विकासात्मक प्रक्रिया आरंभ होने से दो विभिन्न प्रणालियां, एक परंपरा व अज्ञानता पर आधारित, और दूसरी प्रोद्योगिकी व प्रवर्तनों पर आधारित, महिलाओं के विकास के लिए इन दोनों प्रणालियों, का सुसंगत समक्रमण होना आवश्यक है। इस परिवर्तन प्रक्रिया काल में शिक्षा की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है, जिसके अंतर्गत आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में विकास के साथ ही विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में नए प्रवर्तनों के बारे में समुदाय को सूचित करना है। इन सब कारणों से शिक्षा महिलाओं के लिए अत्यंत लाभकारी है।

संदर्भ सूची

1. स्पेंसर, उद्धृत सिंह गया, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आरः लाल बुक डिपो, मेरठ, पृ0 401
2. उपरोक्त जे पी सिंह पृ0 519–520
3. बोरदीयू पी, 1990, रिप्रोडक्सन इन एजुकेशन सोसाइटी एण्ड कल्चर, सेज प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 50
4. दुर्खीम उद्धृत सिंह जे पी, समाजशास्त्रः अवधारणाएँ एवं सिद्धांत, पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृ0 510
5. पारसंस टी, 1960, स्ट्रक्चर एण्ड प्रोसेस इन मॉडर्न सोसाइटी, कोलियर मैकमिलन लिमिटेड, लंदन, पृ0 10
6. इलिच इवान, 1970, डी स्कूलिंग इन सोसाइटी, हारपर एण्ड रो लंदन, पृ0 44
7. यंग माइकल,1994, द राइस ऑफ मैरिटोक्रेसी, रूटलेज प्रकाशन, लंदन, पृ0 20
8. उशर रॉबिन व एडवर्डस रिचर्ड, 2009, उतर आधुनिकता व शिक्षा, प्रयाग प्रकाशन, इलाहाबाद,पृ0 34
9. पूर्वोक्त सिंह, पृ0 519–522
10. सच्चर समिति रिपोर्ट
11. एनएसएसओ 61वें राउंड की रिपोर्ट